विज्ञान में कैरियर - मेरा चुनाव

जयंत नार्लिकर

मेरे बचपन की एक घटना है। मैं तीसरी में था। कक्षा में टीचर ने पूछा - 'तुम्हारे पिता क्या करते हैं?' चूंकि हमारा स्कूल बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के कैम्पस में था इसलिए हममें से अधिकांश बच्चों के अभिभावक विश्वविद्यालय में काम करते थे। मुझे याद है मेरा जवाब था - 'प्रोफेसर'। 'किस विषय के?' टीचर का अगला सवाल था। मुझे मालूम नहीं था तो टीचर ने ही बताया - 'तुम्हारे पिता गणित के प्राध्यापक हैं।' पूरा जवाब न पता होने के मलाल की जगह तुरंत ही एक उल्लास ने ले ली। तो मेरे पिता ने भी वही विषय पढ़ा था जो मुझे सर्वाधिक प्रिय है।

यह घटना बताने का मेरा उद्देश्य इस बात को रेखांकित करना है कि गणित में मेरी रुचि मेरे पिता द्वारा थोपी गई नहीं है और ना ही अन्यों द्वारा मुझे यह कहने से पैदा हुई है कि मुझे मेरे पिता की तरह गणितज्ञ बनना चाहिए। मुझे ऐसे कई मामले पता हैं जब जानबूझकर या अनजाने में ही बच्चों पर अपने अभिभावकों की उपलब्धियों को दोहराने का दबाव डाला जाता है।

गणित और विज्ञान में मेरी रुचि को मेरे पिता ने नोटिस किया। उन्होंने ही गणित की पहेलियों, विरोधाभासों आदि जैसे मज़ेदार पहलुओं से मेरी पहचान कराई। कभी वे खुद मेरे साथ बैठकर इन पहलुओं की साझेदारी करते तो कभी इस तरह की किताबें देकर। उन्होंने मुझे और मेरे भाई को विज्ञान के प्रयोग करने को प्रेरित किया। कैम्पस का हमारा घर बहुत बड़ा था, इतना बड़ा कि उसमें मेरे और मेरे भाई के लिए एक प्रयोगशाला खोली जा सकी थी।

उस वक्त अन्य विश्वविद्यालयों से प्राध्यापकों का आना और स्थानीय मेज़बानों के यहां रहना आम बात थी। इसके चलते एन.आर. सेन, राम बिहारी, ए.सी. बैनर्जी और वैद्यनाथ स्वामी जैसे गणितज्ञों का हमारे यहां रहना होता रहता था। मैं पूरी तरह तो उनकी बातें न समझ पाता लेकिन इस परिवेश ने मुझमें गणित की एक छवि बना दी।

पनपना

मेरे जीवन में एक महत्वपूर्ण मोड़ तब आया जब मैं आठवीं में था। इसने मेरे अन्दर एक प्रतियोगी भावना जागृत कर दी। मेरे मामा मोरेश्वर हुज़ूरबाज़ार (मोरूमामा) गणित में स्नातकोत्तर की पढ़ाई करने हमारे यहां आए। वे बहुत ही बुद्धिमान अध्येता थे। उन्होंने मुम्बई विश्वविद्यालय से बी.एससी. की थी। (बाद के सालों में वे इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, मुम्बई में प्राध्यापक और फिर निदेशक बने)। मोरूमामा ने गणित में मेरी रुचि को पहचाना। उन्होंने यह भी देखा कि मेरे पिताजी ने दीवार पर दो ब्लैक बोर्ड बनाए थे, एक मेरे लिए और एक मेरे भाई के लिए। हम इस पर जो चाहे लिखते, बनाते। मोरूमामा ने इन बोर्ड का एक नया इस्तेमाल सोचा। वे कभी-कभी बोर्ड पर 'जे.वी.एन. के लिए एक चुनौती' लिखकर उसके नीचे गणित की कोई पहेली या सवाल लिख देते। सवाल वहां तब तक लिखा रहता जब तक मैं उसे हल न कर लेता या फिर हाथ न खड़े कर देता (वैसे ऐसा कम ही होता था)।

मोरूमामा के सवाल निश्चय ही मेरे स्कूली पाठ्यक्रम से बाहर की चीज़ होते, इनमें या तो किसी विश्लेषणात्मक तर्क या जोड़ तोड़ की ज़रूरत होती। हर सवाल से मेरा गणित के एक नए व अनछुए पक्ष से साक्षात्कार होता। मुझे अफसोस है कि इन सवालों का मैंने कोई रिकॉर्ड नहीं रखा। इस प्रक्रिया ने मुझमें एक मुश्किल सवाल के रूप में परोसी चुनौती को स्वीकार करने की प्रवृत्ति पैदा कर दी।

मैं यहां यह कहना चाहूंगा कि स्कूल में भी मुझे हौसला अफज़ाई करने वाले कुछ शिक्षक मिले। कभी-कभी मैं मोरूमामा के सवालों को स्कूल ले जाता। मेरे गणित के अध्यापक (श्री पाण्डे) इन सवालों पर चर्चा करने का समय निकालते हालांकि वे स्वयं भी इन्हें हल न कर पाते। आज

मेरे पिताजी ने दीवार पर दो ब्लैक बोर्ड बनाए थे, एक मेरे लिए और एक मेरे भाई के लिए। हम इस पर जो चाहे लिखते, बनाते। मोरूमामा कभी-कभी बोर्ड पर 'जे.वी.एन. के लिए एक चुनौती' लिखकर उसके नीचे गणित की कोई पहेली या सवाल लिख देते। मोरूमामा के सवाल निश्चय ही मेरे स्कूली पाठ्यक्रम से बाहर की चीज़ होते, इनमें या तो किसी विश्लेषणात्मक तर्क या जोड़ तोड़ की ज़रूरत होती। हर सवाल से मेरा गणित के एक नए व अनछुए पक्ष से साक्षात्कार होता।

विद्यार्थियों की बड़ी संख्या और भारी पाठ्यक्रम के तले दबे कितने शिक्षक गणित की इन पगडंडियों में चलने का समय निकाल पाते हैं। मुझे अच्छी तरह याद है रेखागणित की एक प्रमेय को सिद्ध करने पर हुई चर्चा पूरे एक पीरियड तक चली थी। प्रमेय थी : अगर एक त्रिभुज के आधार कोणों के द्विभाजक बराबर हैं तो त्रिभुज समद्विबाहु होगा।

मैन ऑफ मैथिमैटिक्स, *द वर्ल्ड ऑफ मैथिमैटिक्स*, *लिविंग बायोग्राफीज़ ऑफ ग्रेट साइंटिस्ट* जैसी किताबों ने मेरे बाल मन में प्रतिभा के धनी व्यक्तियों के उद्वेगों और निराशाओं की छाप छोड़ दी। विज्ञान रटने वाला विषय नहीं, वरन कुछ नया कर दिखाने का कार्यक्षेत्र है। महान वैज्ञानिकों की सनकों के बारे में जानना और यह पता चलना कि वे भी कभी-कभार गल्तियां भी कर देते हैं मेरे लिए एक नई बात थी। लेकिन विज्ञान में स्वतः संशोधन होते रहने का तरीका अंततः सही जवाब की चौखट पर ले ही आता है। विज्ञान को बतौर कैरियर चुनने में यह एक प्रमुख प्रेरणा स्रोत रहा।

फैसला

हालांकि मैंने गणित के प्रति अपनी चाहत पर ज़ोर दिया है परन्तु भौतिकी भी मेरे पसंदीदा विषयों में था। वैसे मेरे स्कूली जीवन के विज्ञान का पाठ्यक्रम मज़ेदार व रुचिपूर्ण न था। कभी-कभार ही कोई ऐसी पहेली होती जो मुझे उत्तेजित करती। प्रकृति के नियम कैसे काम करते हैं इसे समझने व सीखने का मज़ा मुझे तब न मिला। तो भौतिकी मेरी दूसरी पसंद थी और उसके बहुत ही करीब थी संस्कृत के प्रति मेरी चाहत।

संस्कृत के प्रति मेरे प्यार के बीज मेरी मां और मोरूमामा ने बोए। मेरी मां ने कालिदास और भवभूति से मेरा परिचय कराया... भाषा की ताकत और सौंदर्य की अनुभूति ऐसी उत्कृष्ट साहित्यिक रचनाओं के ज़रिए ही हो सकती है।

क्या ही अच्छा होता अगर हमारी विश्वविद्यालयीन प्रणाली इतनी लचीली होती कि विज्ञान का छात्र विज्ञान के साथ-साथ संस्कृत भी पढ़ सकता। लेकिन अफसोस कि ऐसा है नहीं। मैट्रिक के बाद मुझे विषय चुनना था। मैं संस्कृत तभी ले सकता था जब कला के विषय चुनता। फैसला करने की घड़ी मेरे सामने तब आई जब मैंने इंटरमीडियट साइंस का इम्तहान दिया (आज की बारहवीं या हायर सैकेण्ड्री के समकक्ष)। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय का एक काफी जाना-माना इंजीनियरिंग कॉलेज था, इसमें प्रवेश मुश्किल था और उम्मीदवार बहुत थे। मुझसे उम्मीद थी कि मैं इंटरमीडियट साइंस में अच्छे अंक पाऊंगा। तो एक तो यही विकल्प था मेरे सामने।

मुझे याद है मैं इंजीनियरिंग कॉलेज के वार्षिक समारोह में जाया करता था जहां विद्यार्थियों द्वारा बनाई गई मशीनों को आम जनता के लिए प्रदर्शित किया जाता था। मशीनें जिस तरह से अलग-अलग काम करतीं उसे देखना मुझे बहुत भाता था। इस खास मौके पर कॉलेज के कुछ प्राध्यापक मुझसे मिले और कहा कि वे अगले साल मुझे इस कॉलेज के विद्यार्थी के रूप में देखने की उम्मीद करते हैं।

लेकिन फैसला तो हो चुका था। गणित में मेरी रुचि ने इंजीनियरिंग के विकल्प को खारिज कर दिया था। मुझे

लगता था कि उन सवालों के जवाब ढूंढने में क्या मज़ा जिनके जवाब सबको (या कम से कम मोरूमामा को तो) पता ही हैं। मज़ा तो उन सवालों को हल करने में आएगा जिनके जवाब कोई नहीं जानता। मैंने अपने पिताजी को ऐसे सवालों पर काम करते देखा था। वे जहां बैठते वहां फर्श पर लम्बी-लम्बी गणनाओं के कागज़ बिखरे रहते।

अपनी भावी योजना में मैं खुद को कैम्ब्रिज की गणित प्रतिस्पर्धा 'मैथेमैटिकल ट्राइपॉस' में देखता जो मेरे हिसाब से एकदम सही कसौटी थी। मैंने फैसला किया कि मैं बनारस हिंदू विश्वविद्यालय से स्नातक परीक्षा पास करने के बाद कैम्ब्रिज के लिए कोशिश करूंगा। मेरे पिताजी भी इसके लिए पूरी तरह से तैयार थे, जिन्होंने स्वयं कैम्ब्रिज में एक सफल कैरीयर व्यतीत किया था।

कैम्ब्रिज की राह

इस राह में दो रोड़े थे। एक तो कैम्ब्रिज में दाखिला मुश्किल था। मात्र बी.एससी. में अच्छे अंकों से यहां काम न चलता (50 के दशक में भारतीय विश्वविद्यालयों में शिक्षा का स्तर बाहरी मूल्यांकन के हिसाब से काफी कमज़ोर था)। और अगर दाखिला मिल भी जाता तो पैसा दूसरी मुख्य समस्या होती। सौभाग्यवश मेरे मामले में कई अनुकूल बातें हुईं। मेरे पिता की उपलब्धियों ने मेरी बी.एस.सी. की प्रथम श्रेणी को विश्वसनीयता प्रदान करने में मदद दी। इसके बावजूद कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने मुझे सम्बद्धता का दर्जा देना नामंजूर कर दिया, नतीजा यह हुआ कि मुझे दो की बजाए तीन सालों में डिग्री मिलनी थी। इसके पीछे कारण यह था कि इस दर्जे के लिए बम्बई विश्वविद्यालय की बी.एससी. की डिग्री को मान्यता मिली थी लेकिन बनारस हिंदू विश्वविद्यालय की बी.एससी. को नहीं। तो इस तरह मुझे तीन वर्षीय पाठ्यक्रम हेतु दाखिला मिल गया।

जहां तक वित्तीय पक्ष की बात है, तो इसका इन्तज़ाम

बच्चों के बीच मुस्कुराते

जे.एन. टाटा एन्डौमेन्ट के वज़ीफे ने कर दिया। यहां भी मेरा अतीत मददगार साबित हुआ। मेरे पिता को भी जे.एन. टाटा एन्डौमेन्ट वज़ीफा मिला था। लेकिन फिर भी मामला आसान न था। मेरा साक्षात्कार कैम्ब्रिज में गणित की परीक्षा में प्रथम आने वाली श्रीमती पिरोज़ा जे बेसुगर ने लिया जो काफी मुश्किल रहा। उन्होंने मुझे पास तो कर दिया लेकिन इस चेतावनी के साथ कि कुछ महान टाटा शोधार्थियों के सुपुत्र (सूची समेत) कैम्ब्रिज में कुछ खास कमाल नहीं कर पाए हैं। उन्होंने मुझे हिदायत दी की मैं बहुत मुगालते में न रहूं जिस पर मैंने पूरी तरह अमल किया।

यहां मैं संक्षेप में एक और कैरीयर के विकल्प पर चर्चा करना चाहूंगा जो मुझे इस मुकाम पर हासिल था। जब मैंने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में गणित की परीक्षा में प्रथम आने वाले श्री जी.आर.पी. परांजपे से बात की तो उन्होंने पूछा, गणित ऑनर्स के बाद क्या मैं भारतीय प्रशासनिक सेवा में जाना चाहूंगा? कैम्ब्रिज डिग्री का आई.ए.एस. के लिए पहली सीढ़ी बनना उन दिनों काफी आम बात थी। कैम्ब्रिज पास करने के बाद उनसे भी यही उम्मीद की गई थी लेकिन उन्होंने शिक्षण को अपने कैरियर के बतौर चुना था।

मैंने दृढ़तापूर्वक जवाब दिया, नहीं जनाब मैं शिक्षण और शोध को अपने कैरीयर के बतौर चुनना चाहूंगा। *(स्रोत विशेष फीचर्स)*